ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 167-168

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 अरविन्द कुमार द्विवेदी

सहायक प्राध्यापक– हिन्दी, अमृतलाल महाविद्यालय, बैकुंठपुर–फरेंदा, महराजगंज (उ0प्र0) भारत

Received-02.02.2023, Revised-07.02.2023, Accepted-11.02.2023 E-mail: arvindcmj67@gmail.com

सारांशः ***जब भी किसी क्षेत्र विशेष के अध्ययन के लिए कुछ सिद्धान्त निश्चित हो जाते हैं, तब इस प्रकार की सिद्धान्तावली को उस क्षेत्र में शास्त्र की संज्ञा दे दी जती है। समाज शास्त्र से स्वतः ध्वनित होता है कि यह वह शास्त्र है, जिसमें ऐसी सिद्धान्तावली रहती है, जिसके आधार पर समाज का अध्ययन किया जाता है। शास्त्रीय अध्ययन सदैव वैज्ञानिक होता है। अस्तु समाजशास्त्रीय अध्ययन भी समाज का वैज्ञानिक अध्ययन ही होगा।***

हिन्दी मे समाजशास्त्रीय अध्ययन (अन्तर्विद्यावर्ती शोध) अभी नया है। अब शोधार्थियों का ध्यान इधर जा रहा है। भविष्य में इस दिशा में पर्याप्त प्रमाणित और उत्तम शोध की आशा की जा सकती है।

कुंजीभूत शब्द– संज्ञा, ध्वनित, अध्ययन, समाजशास्त्रीय अध्ययन, वैज्ञानिक अध्ययन, अन्तर्विधावर्ती शोध, साहित्य विधा।

हिन्दी में साहित्य का समाजशास्त्र अभी अनुमान की स्थिति से आगे नहीं बढ़ पाया है। उसके अर्थ और प्रयोजन के सम्बन्ध में अबतक कोई सुनिश्चित राय नहीं बन पायी है। समाजशास्त्र आधुनिक पश्चिमी चिन्तन की देन है और साहित्य का समाजशास्त्र तो और भी बाद की साहित्य विधा है। वह पश्चिम में भी विकासशील अवस्था में है।

हिन्दी में साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के स्वरूप और प्रयोजन के बारे मे अनिश्चय स्थिति का अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि समाजशास्त्रीयता का प्रयोग कहीं गाली के रूप में होता है और कहीं अलंकार के रूप में। बहुत पहले शिवदान सिंह चौहान ने आचार्य रामचन्द्र षुक्ल को एकांगी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का इतिहास लेखक घोषित किया था। रामविलास शर्मा ने उसका जोरदार खण्डन किया। विडम्बना देखिये कि स्वयं रामविलास शर्मा की पुस्तक ''नई कविता और अस्तित्ववाद'' के आवरण पृष्ठ पर छपी राय में उनको समाजशास्त्रीय आलोचक कहा गया है। लिखा है कि ''उन्होने (रामविलास शर्मा ने) साहित्य शास्त्र से समाजशास्त्र को जोड़कर एक नयी कसौटी का निर्माण किया है।''

साहित्य के समाजशास्त्र की मुख्य प्रवृत्ति समग्रतावादी है। वह साहित्य के सभी रूपों और पक्षों को समग्रता में समझने पर जोर देता है। साहित्य प्रक्रिया के मुख्यतः तीन पक्ष हैं–लेखक, रचना और पाठक। साहित्य विश्लेषण की अधिकांश दृष्टियों के केन्द्र में इन तीनों मे से कोई एक रहता है। साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन में इन तीनों का विवेचन होता है और इनके आपसी सम्बन्धों का भी। उसमें गम्भीर कलात्मक साहित्य के साथ लोकप्रिय साहित्य के सामाजिक संदर्भ और प्रयोजन का वर्णन होता है। केवल साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन में ही साहित्य–प्रक्रिया के अनुभवों और तथ्यों का व्यवहारिक विवेचन होता है। जिसमें साहित्य के लेखन, प्रकाशन, वितरण और उपभोगता की पूरी व्यवस्था की भूमिका स्पष्ट होती है। इसका महत्व इस बात में भी है कि साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन किसी भी रचना को ठीक से समझने के लिए उस सामाजिक यथार्थ की अलग से समझ की माँग करता है। जिससे रचना अनेक रूपों में जुड़ी होती है। यह आवश्यक है कि आज के जमाने में केवल साहित्य संसार में रहकर उसको पूरी तरह समझना सम्भव नहीं है। अब साहित्य को समझने के लिए साहित्य के बाहर की दुनिया को जानना जरूरी हो गया है।

साहित्य के समाजशास्त्र का महत्वपूर्ण विकास साहित्य की सामाजिकता की मीमांसा की दिशा में हुआ है। इस धारा के अन्तर्गत साहित्यिक कर्म और कृतियों के माध्यम से साहित्य की सामाजिकता की व्याख्या होती है। इसमें रचनाकर्म दूसरे सामाजिक कर्मों की सापेक्षता में और साहित्यिक कृतियों को व्यापक सामाजिक यथार्थ के सन्दर्भ में देखा–परखा जाता है। साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन आधुनिक समाज में साहित्य की रचना सत्ता और सार्थकता की पहचान के बौद्धिक प्रयत्न की देन है। आज सम्पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया से साहित्यिक प्रक्रिया का सम्बन्ध बदल गया है। आज के समाज से साहित्य के बदले हुए सम्बन्ध को यथार्थवादी ढंग से समझने की जरूरत है, न कि उसकी काल्पनिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तथा कथित अन्तर्वर्ती आलोचना से चिपके रहने की। साहित्य का समाजशास्त्र आधुनिक समाज में साहित्य को वास्तविक स्थिति और भूमिका को यर्थावादी ढंग से समझने का प्रयास करता है। इस तरह स्पष्ट होता है कि समाजशास्त्रीय आलोचक अपनी आलोचना में कृति को सामाजिक परिवेश मे रखता है और उसके पारस्परिक सम्बन्ध–सूत्रों पर प्रकाश डालता है। हैरी लीविन के अनुसार ''साहित्य और समाज के सम्बन्ध अन्योन्य हैं। साहित्य केवल सामाजिक कारण का परिणाम नहीं हे, बल्कि यह सामाजिक प्रभावों का कारण भी है''।

स्वरूप– साहित्य के समाजशास्त्रीय स्वरूप को समझने के लिए उसके भीतर समाज से साहित्य के सम्बन्ध की व्याख्या में सक्रिय मुख्य दृष्टियों को जान लेना आवश्यक है। आजकल साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन के क्षेत्र में तीन

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

दृष्टियाँ सक्रिय हैं, जिनका लक्ष्य है– (1) साहित्य मे समाज की खोज (2) समाज में साहित्य की सत्ता और साहित्यकार की स्थिति का विवेचना (3) साहित्य और पाठक के सम्बन्ध का विश्लेषण।

साहित्य में समाज– साहित्य के समाजषास्त्र का मुख्य उद्देश्य है समाज से साहित्य के सम्बन्ध की खोज और व्याख्या करना। साहित्य के समाजशास्त्रीय चिन्तन का आरम्भ समाज से साहित्य के सम्बन्ध की खोज के साथ हुआ था। इस चिन्तन के विकास मे अग्रगामी भूमिका निभाने वाली क्रान्तिकारी नारी मादाम स्तेल ने साहित्य की उत्त्पत्ति में समाज की भूमिका और समाज पर साहित्य के प्रभाव का विवेचना किया था। उन्होंने समकालीन राजनीति से उसके गहरे सम्बन्ध को विशेष महत्व दिया था। इस चिन्तन को अधिक व्यवस्थित रूप देने वाले तेन ने भी साहित्य की सामाजिक भूमि और उसके जातीय चरित्र पर बल देते हुए उसे समाज के बारे मे ज्ञान का प्रमुख स्रोत माना उन्नीसवीं सदी में साहित्य का समाजशास्त्रीय चिन्तन साहित्य से समाज को दो स्तरों पर जोड़ता था। एक तो समाज को साहित्य की उत्त्पत्ति और उसके स्वरूप का निर्धारण करने वाली शाक्ति के रूप में और दूसरे साहित्य को समाज के दर्पण के रूप में उस समय के विचारक, साहित्य से समाज के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के लिए साहित्य की अन्तर्वस्तु के विश्लेषण को पर्याप्त मानते थे। हिन्दी में महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग में दर्पणवादी दृष्टिकोण अधिक प्रचलित था। उस समय के लेखकों ने बार–बार साहित्य को समाज का दर्पण कहा है।

समाज मे साहित्यकार और साहित्य– साहित्य के समाजशास्त्र की दूसरी दृष्टि समाज में साहित्य की भौतिक सत्ता और साहित्यकार की वास्तविक स्थिति के विश्लेषण पर बल देती है। इस परम्परा में विधेयवादी, अनुभववादी दृष्टिकोण की प्रधानता है और इसका सर्वाधिक विकास अमेरिका तथा फ्रांस मे हुआ है। इसके अन्तर्गत दो प्रवृत्तियाँ हैं। एक प्रवृत्ति साहित्य के समाजशास्त्र को समाजशास्त्र की शाखा बनाने पर जोर देती है, दूसरी प्रवृत्ति समाजशास्त्री दृष्टिकोण से समाज में साहित्य और साहित्यकार की स्थिति समझने की कोशिश करती है। साहित्य के समाजशास्त्र का सबसे अधिक विकास इसी दृष्टि के अन्तर्गत हुआ है।

पाठक समुदाय के बीच साहित्य– साहित्य के समाजशास्त्र का विकास एक और दिशा मे हुआ है। जिसका उद्देश्य है पाठक से साहित्य के सम्बन्ध का विवेचन करना। पाठक के पास पहुँचकर ही कृति सार्थक होती है। कृति से, पाठक से सम्बन्ध के विचार के बिना पूरी साहित्य प्रक्रिया की समझ अधूरी रहती है।

वर्तमान समय में लेखक और पाठक सम्बन्ध पहले की तुलना में बहुत बदल गया है। पहले कवि सीधे समाज को सम्बोधिक करता था। जब साहित्य मौखिक था तो श्रोता से सम्वाद सहज था। जब लिखित हुआ तो पाठक अस्तित्व में आये। पाठक और साहित्य के सम्बन्ध पर दो दृष्टियों पर अधिक बिचार हुआ है। एक में मुख्य रूप से साहित्य के विकास में पाठक समुदाय की भूमिका का विवेचन हुआ तो दूसरी में, कृति में पाठकीय अभिग्रहण, पाठक पर प्रभाव और पाठकीय प्रतिक्रिया विश्लेषण किया गया है। पहली परम्परा इंग्लैण्ड मे विकसित हुई और दूसरी जर्मनी में। पहली परम्परा का विकास इतिहास लेखन के अन्तर्गत हुआ और दूसरी का आलोचना के क्षेत्र में। इसलिए पहली में ऐतिहासिक चेतना अधिक है, दूसरी में भाष्य की प्रवृति।

समाजशास्त्रियों के अध्ययन के दायरे में मुनष्य के सभी संगठन और व्यवहार आ जाते हैं। वे जातियों, जनजातियों, सरकारों के अलावा सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं व्यावसायिक संगठनों की समस्याओं का भी अध्ययन करते हैं। कुछ समाजशाास्त्री जहाँ अपने को छोटे समुदायों तक सीमित रखते हैं, वहीं कुछ समाजशास्त्री प्रत्येक व्यक्ति के परिवेश का अध्ययन करते हैं, और पता लगाते हैं कि उन पर दूसरे व्यक्ति अथवा संगठनों समुदायों का क्या प्रभाव पड़ता है? कुछ अन्य, सामाजिक नीतियों, व्यवहारों के अध्ययन पर अपना अध्ययन केन्द्रित करते है और उस पर समुदाय के लोगों की उम्र, लिंग या जाति के असर पर विवेचन करते हैं। एक समाजशास्त्री के रूप में किसी समाज विशेष की निर्धनता, पारस्परिक सम्बन्ध वहाँ फैले अपराध तथा विभिन्न प्रकार की जीवन षैली का अध्ययन जटिल एवं महत्वपूर्ण कार्य है। सामुदायिक संगठन के क्रिया–कलाप अपने आकार तथा भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप बदलते रहते हैं। समाजशास्त्री की अर्न्तदृष्टि यह भाँप लेने में तेज होती है कि एक व्यक्ति पर उसके परिवार, स्कूल, खेल और सगे सम्बन्धियों तथा उनके कार्य इत्यादि का क्या प्रभाव पड़ता है? उनकी इस प्राथमिक सूचना के आधार पर विभिन्न पेशों के लोग जैसे समाजसेवी, अध्यापक, नर्सें आदि अपनी नीतियाँ तय करती हैं। दूसरे सामाजिक विज्ञान भी उनके काम मे अपना सहयोग देते हैं।

आज स्थिति है कि विज्ञापन से उद्योग तक और अपराध विज्ञान से औषधि विज्ञान तक हर क्षेत्र में समाजशास्त्रियों के प्रयोग से, अनुसंधान से बिक्री बढ़ती है। उत्पादन एवं गुणवत्ता मे सुधार होता है, सामाजिक रीति–निति का निर्धारण किया जाता है, सामाजिक तनाव दूर किये जाते हैं तथा राजनीतिक प्लेटफार्म भी विकसित किये जाते हैं। इतनी व्यापकता के मद्देनजर समाजशास्त्रीय अध्ययन का भविष्य सुनहरा एवं स्पष्ट है।

*****